Dr. Kumari Priyanka

History department

H.D Jain college ara

Notes forB.A part 3,paper 5

Topic:–सल्तनतकालीन कला

[Art Under the Sultanate)

सल्तनत काल का सांस्कृतिक विकास महत्त्वपूर्ण योगदान है। दिल्ली सुलतानों एवं स्थानीय शासकों ने ललित कलाओं, भवन निर्माण-कला, शिक्षा एवं साहित्य को प्रोत्साहित किया एवं इन्हें संरक्षण प्रदान किया।

कला (Art)

कला के क्षेत्र में सल्तनत काल में सर्वाधिक प्रगति चित्र एवं संगीत कला के क्षेत्र में हुई। उत्तरी भारत में इस्लामी प्रभाव के कारण मूर्तिकला अधिक विकसित नहीं हो सकी, परंतु चित्रकला, विशेषतः भित्तिचित्र एवं पांडुलिपियों की चित्रकारी करने की कला एवं संगीत के विभिन्न रागों एवं वाद्ययंत्रों का विकास इस युग में हुआ।

चित्रकला-साधारणतः यह माना जाता है कि मुस्लिम शासकों के धार्मिक दृष्टिकोण के कारण मूर्तिकला की ही तरह चित्रकला का भी पतन हुआ; क्योंकि कुरान किसी जीवधारी का चित्र बनाने की अनुमति नहीं देता तथापि चित्रकला को प्रगति इस काल में नगण्य नहीं मानी जा सकती। तत्कालीन साहित्यिक स्रोतों एवं कुछ पुरातात्त्विक सामग्री से चित्रकला के विकास पर प्रकाश पड़ता है। इस काल में भित्तिचित्र, लघुचित्र एवं चित्रांकित पांडुलिपियाँ तैयार को गई। ताजुदिन रजा और इसामी के लेखों से ज्ञात होता है कि इल्तुतमिश के समय में चित्रकला प्रचलित थी। इस प्रकार, अलाउद्दीन खिलजी और फीरोजशाह तुगलक के समय में इस कला की प्रगति की पुष्टि समकालीन साहित्यिक स्रोतों से होती है। इससे विदित होता है कि महल के निजी कक्षों को, दीवारों को सुंदर भित्तिचित्रों से सजाया जाता था। कपड़े पर भी कसीदे की सहायता से चित्र बनते थे। सल्तनतकालीन भित्तिचित्रों के कुछ प्रमाण चम्पानेर एवं सरहिंद के स्मारकों तथा मखदुमवाली मस्जिद से मिलते हैं। इन भवनों को दीवारों को सुंदर बेल-बूटों से अलंकृत किया गया था।

भित्तिचित्र से अधिक प्रगति चित्रित पांडुलिपियाँ तैयार करने में हुई। अनेक लघुचित्र भी बने। यह कला तुर्की-विजय के पहले से ही भारत में प्रचलित थी। यह कला मांडू, जौनपुर और बंगाल में सर्वाधिक प्रगति पर थी। गुजरात के धनी व्यापारियों ने भी इस कला के विकास में योगदान किया। ताड़ के पत्रों एवं कागज पर सुंदर चित्र बनाए गए एवं पुस्तकों के किनारों को विभिन्न रंगों की सहायता से सजाया गया। इस

काल की पांडुलिपियों में खमसा, शाहनामा, मथनवी, नियामतनामा, मिफताह-उल-फुजाला, लौर चंदा चौर पंचासिका समूह, गीत गोविंद, भागवतपुराण, रागमाला आदि प्रमुख है। इन चित्रों की विषयवस्तु लोकप्रिय कथानकों से संबद्ध थी। दक्षिण भारत में मूर्तिकला का भी विकास हुआ। नटराज की सुंदर मूर्तियां बनाई गई।

संगीत कला,:-सल्तनत काल में सूफी-संतों, हिंदू-भक्तों एवं राजदरबार के प्रभावों के कारण संगीत-कला का अपेक्षित विकास हुआ। यद्यपि कुरान की पाबंदियों के कारण सुल्तान संगीत पसंद नहीं करते थे, तथापि अनेक सुल्तानों ने संगीत को प्रश्रय दिया। इस काल में उत्तरी भारत और दक्षिणी भारत में संगीत की दो विभिन्न धाराओं का विकास हुआ। उत्तरी भारत का सबसे महान संगीतज्ञ एवं विद्वान अमीर खुसरो था। उसने ऐमान, घोरा, सनम, तिलक साजगिरी, सरपादा इत्यादि रागों को प्रचलित किया। खुसरो भारतीय संगीत से अत्यंत ही प्रभावित था। उसने भारतीय रागों को बारह भागों रास्त, शहनवाज, ढोका, कुर्द, सीका, गिरका, हिजाज, नवा, हिसार, हुसैनी, अगन और नीम माहुर में विभक्त किया। इन स्वरों का नामकरण ईरानी नामों के आधार पर किया गया। कुछ विद्वानों ने तबला और सितार का आविष्कर्ता भी खुसरो को माना है, परंतु अधिकांश विद्वान इसे स्वीकार नहीं करते। कव्वाली- गायन की प्रथा को आरंभ करने का श्रेय भी अमीर खुसरो को ही दिया जाता है। फीरोज तुगलक के समय में संगीत के एकीकरण की प्रक्रिया चलती रही। रागदर्पण नामक संगीत की पुस्तक का फारसी-भाषा में अनुवाद हुआ। सूफी-संतों एवं क्षेत्रीय शासकों ने भी संगीत के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। जौनपुर और ग्वालियर संगीत के विख्यात केंद्र थे। सूफियों ने गजल और कवाल्ली-गायन की परम्परा का विकास किया। इल्तुतमिश, शाहजादा मुहम्मद, अलाउद्दीन खिलजी, मुहम्मद तुगलक, सिकंदर लोदी इत्यादि ने संगीत को प्रश्रय दिया। हिंदू संतों ने, विशेषतः चैतन्य महाप्रभु ने कीर्तन को बढ़ावा दिया। दक्षिण भारत में संगीतशास्त्र पर अनेक पुस्तकें लिखी गईं, जिनमें सबसे प्रसिद्ध आचार्य शार्गदेव द्वारा रचित संगीतरत्नाकर है। विजयनगर-राज्य ने भी संगीत के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। इसी काल में संगीतरत्नाकर पर कल्लिनाथ की टीका एवं महाराणा कुम्भा के संगीतराज की रचना हुई। खिलजी काल में दक्षिण का सबसे महान गायक गोपाल नायक था।

नृत्यकला:-संगीत के साथ-साथ राजदरबारियों एवं अमीरों ने नृत्य को भी प्रश्नय दिया। बड़ी संख्या में नृत्यांगनाएँ रखी जाती थीं, जो लोगों का मनोरंजन करती थीं। दक्षिण में नृत्य की विभिन्न शैलियों का उदय हुआ। दक्षिणी नृत्य की शैलियाँ थीं- भरतनाट्यम, मोहिनीअट्टम, और कथकली। ओडिसी उड़ीसा की नृत्यशैली थी और मंदिरों में देवदासियाँ यह नृत्य करती थीं। नाटकों एवं वाद्य नाटकों का भी विकास हुआ।